# उत्तर-पश्चिमी राजपूताना में मेघवाल जाति का सामाजिक-आर्थिक योगदान ( 1750-1950 ई. )

**महावीर नायक** *
**डॉ. बीटा शर्मा** **

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक जाति का अपना वंशानुगत और परम्परागत व्यवसाय रहा है, जिसे वह वर्षों से अनुसरित करता रहा है। एक जाति दूसरी जाति का कर्म लाभप्रद होने पर भी नहीं अपनाती थी। दूसरी जाति के कर्म और व्यवसाय के अपनाने पर कठोर नियंत्रण विभिन्न जातियां अपने व्यवसाय और कर्म में ही संतुष्ट रही। शूद्रों में चर्मकार अपने चमड़े के कार्य में ही व्यस्त रहा तथा उसी में सुख का अनुभव करता था। इस प्रकार पेशे अथवा व्यवसाय के कारण हिन्दू समाज को जातियों ने अपनी पृथक प्रस्थिति बना रखी थी। किसी भी व्यक्ति के व्यवसाय चयन में न केवल जाति-बंधुओं का नैतिक नियत्रण तथा सामाजिक प्रतिबन्ध ही कार्य करता था, अपितु अन्य जातियों का नियंत्रण भी प्रभाव डालता था। इस प्रकार व्यवसाय के चुनाव में दुहरा नियंत्रण था। ये जातियां जाति को दूसरे व्यवसाय और धंधे अपनाने की अनुज्ञा नहीं देती थी, न ही किसी प्रकार का उसमें ताल-मेल करने देती थी अत: व्यवसाय और धंधों के अनुसार जाति का विकास हुआ, जिसमें परम्परानुसार सबके अलग-अलग पेशे थे। भाषायी और प्रादेशिक भिन्नता के आधार पर अनेक जातियाँ विकसित होकर समाज में स्थिर हो गई तथा कालान्तर में इन्होंने अपना स्थान बना लिया। इन जातियों का, इनके कार्यों और अभिव्यक्तियों के अनुसार विशिष्ट्तापरक नाम भी पड़े ।[1]

राजपूताना में इस्लाम धर्म का प्रवेश ग्यारहवीं शताब्दी से और विशेषत: तेरहवीं शताब्दी में हुआ। तुर्क आक्रमणों के कारण राजपूताना के जन-जीवन को नई परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। प्रत्येक जाति का अनेक उपजातियों में विभाजन हो चूका था। निम्न जातियाँ समाज की अनिवार्य सेवाएं करने पर भी तिरस्कार और घृणा का पात्र समझी जाती थी। इस कारण अन्त्यज (अछूत) कही जाने वाली जातियों की स्थिति अत्यधिक दयनीय हो गई। मुस्लिम शासनकाल में युद्ध में हार जाने के कारण राजपूतों के सामने दो ही विकल्प रहते या तो वे मुसलमान बन जाये या फिर निम्न वर्गो में मिलकर उनके पेशे को अपनाकर अपना जीवन निर्वाह करें। इसी प्रकार जाति व्यवस्था की कठोरता के कारण

जातीय नियमों को भंग करने पर सबसे कठोर दण्ड जाति से निष्कासित करना था। इन्ही जाति बहिष्कृत व्यक्तियों के कारण सैकड़ों जातियाँ व उपजातियाँ बन गई।[2] चर्मकार जातियों में मेघवाल, चमार, रैगर ,मोची, डबगर आदि हैं। कुछ लोगों को विपत्ति के समय मेघवालों के घर का खाना खाने या पानी पी लेने से या मरी हुई गाय को भाइयों या उनकी औरतों के कहने पर फेंक देने पर जाति से निष्काषित कर दिया गया। ऐसे ही कारणों से विभिन्न जाति के लोग जिनमें प्रमुख रूप से राजपूत, जाट, पालीवाल ब्राह्मण, तथा चारण आदि मेघवालों में मिल गए।

प्रस्तुत आलेख में मेघवाल जाति द्वारा सामाजिक तथा आर्थिक योगदान में उनकी भूमिका क्या रही, इसका अध्ययन किया जाएगा। राजस्थान राज्य अभिलेखागार में संगृहीत विभिन्न प्रकार के ऐतिहासिक स्त्रोतों के विशाल संग्रह जिसमें *सावा बहियाँ, कागद बहियाँ,* जोधपुर की *सनद परवाना बहियाँ,* इसके अतिरिक्त जैसलमेर बाहियात आदि प्रमुख है। यह पुरालेखीय सामग्री 17वीं सदी से 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध तक क्षेत्रीय इतिहास को प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत करती है। इस आलेख में पुरालेखीय स्त्रोत-सामग्री के आधार पर मेघवाल जाति के सामाजिक एवं आर्थिक योगदान को प्रस्तुत किया गया है।

मेघवाल, बलाई या भांबी उत्तर-पश्चिमी राजपूताने में बहुतायत से पाए जाते हैं। इन्हें मेघवाल या मेघ के वंशज भी कहा जाता है, जिनके बारे में माना जाता है कि वे ब्राह्मण थे।[3] बीकानेर राज्य में चमार - बलाई, चंड, मेघवाल नामों से जाना व पहचाना जाता था।[4] जोधपुर राज्य में मेघवाल, भांभी या बलाई कहा जाता है। जैसलमेर राज्य में मेघवाल चमार, बलाई आदि कहा जाता है। राजपूताना में इन्हे मेघवंशी भी कहा जाता है। भांबी का अर्थ पुकारने वाला व डुंडी पीटने वाला होता है, बंम्भ का अर्थ ढोल भी है जो सरकारी आज्ञा को ढोल बजाकर समस्त ग्राम वासियों को सूचना देने वाले को *भांभी* पुकारा जाता था। जोधपुर राज्य में गांव की बांम यानी बेगार निकालने वाले को बांभी कहते थे। *बांभी* ( *भांभी*) को राज्य की तरफ से पगड़ी बंधाई जाती और एक लकड़ी भी दे दी जाती जिसको *बांभी* हमेशा हाथ में रखता था। *बांभी,* हवलदार के पास हाजिर रह कर कार्य करता जिसके कारण राज्य का कोई कर ( लाग-बाग) उसे नहीं लगता।

गांव बांभी हमेशा मेघवालों में से ही होने के कारण इस जाति का नाम भी बांभी हो गया। इनके चार मुख्य विभाग है, जो आदू या मूल, मारू, जाटा तथा चारणीया कहलाते हैं। अंतिम तीन क्रमश: राजपूत, जाट और चारण के वंशजों से बने हैं। मेघवाल जाति में *बसीटका* ( *बसीका*) नामक वशिष्ठ गोत्री है, जो प्राय: वस्त्र बनाने का कार्य करते थे, उसी

का अपभ्रंश राजपूताना में *बसीठका* और कहीं-कहीं पर *बसीका* शब्द हो गया है। मेघवंशियों में *बसीका* तथा *जाटा* ये दो भेद प्रमुख रूप से पाए जाते हैं। क्षत्रियों के अवशेष अंश जो कई जाटों में मिल गये और कई बुनकर हो गये। इनमें कुछ परम्परागत चमड़े का काम करते हैं, और कुछ हद तक कृषक है तथा अन्य मजदूरी भी करते हैं।

राज्य की और से बेगार के बदले कृषि भूमि प्रदान की जाती थी, जिस पर कोई लाग-बाग (बीघेड़ी) नहीं ली जाती थी।[5] राज्य की ओर से खेती के लिए खेत उन्हीं परिवारों को दिए जाते थे, जो गांव में बेगार निकालने का कार्य करते थे। अन्य परिवार जो बेगार निकालने का कार्य नहीं करते, उन्हें खेती के लिए खेत नहीं दिया जाता था।[6] किसी दूसरे गांव में किसी अन्य की कृषि भूमि मुकाता देकर जोतने की लिए ली जाती तो उन्हें *बीघेड़ी* देनी पड़ती थी।[7] गांव भांभी व राज भांभी को बिना मजदूरी के भुगतान लिए बगैर कार्य करना पड़ता था। उनको निर्वाह के लिए कृषि भूमि प्रदान की जाती थी, जिस पर कोई लाग-बाग नहीं लगता था। कई बार अन्य स्थान पर खेती करने पर चौधरी उनको आधी दर पर भुगतान के लिए हवलदार से इजाजत दिलवा देता था।[8] खेती करने पर बीघेड़ी तथा धुआं भांछ दिए जाने के उल्लेख भी मिलते हैं।[9] कई बार अन्य जाति के किसान की मृत्यु होने पर खेती को जोतने के लिए भी इन्हे दे दिया जाता था।[10]

उच्च वर्ग के लोगों द्वारा इन्हे घरिया (घरेलु चाकर) भी रखा जाता था।[11] इन घरिया चाकर (नौकरो) में चंड, जो कि अपने मालिक के खेत की जुताई तथा अन्य खेती के संबंधित कार्य करते थे। घरिया चाकरों में सुथार तथा नाई भी होते थे।[12] कई बार जबरदस्ती घरिया बनाने के उल्लेख भी मिलते हैं। राज्य द्वारा उनके मूल मालिक को घरिया सौंपने का आदेश गांव मेलूसर के भानीसिंह व चौधरियों को दिया गया था।[13] गांव सारसु में चंड उदिया जेराम, कलिये अभेराम के भाड़ेरुओं (नौकरों) को धाय भाई जयसिंह के लड़के रूघे द्वारा जबर्दस्ती *बन्दीखत* (लिखकर) अपने *भाड़ेरु* बना लिया था। अभयराम के भतीजे द्वारा दरबार में पुकार करने पर तीनों को तथा खत वापस वीरे को सौपने, आइन्दा से कोई ऐसा नहीं करेगा के आदेश दिया गया।[14] कई बार घरिया को लेकर विवाद भी उत्पन्न हो जाता था। ऐसा ही एक विवाद गांव कक्कू के सांखले माने तथा बीदावत अमरसिंह के बीच उत्पन्न हुआ। माने सांखले के पांच आदमी घरिया को अमरसिंघ बीदावत के रुपये चार सौ जमा करवाने तक उनके खेत जोतने होंगे उसके पश्चात् माने का उन पर अधिकार होगा।[15]

चीरे मगरे के *सासण* (धर्मार्थ कृषि भूमि) पर गांव कालासर के उपाध्याय के घरियों सुथार, चंड तथा नाईयों पर इनके *गुवाड़ियों* (संयुक्त परिवार) किसी भी प्रकार का

कोई कर नहीं लगने का आदेश *हवलदार* तथा *तलबीयों* (बुलाने वाले) को दिया गया था।[16]

कई बार बेगारी चंड ठाकुरों से नाराज होकर गांव छोड़ कर किसी दूसरे गांव में बस जाते थे।[17] दूसरे गांव में बस जाने पर तब उन्हें वापस गांव में बसाने हेतु राज्य द्वारा आदेश भेजा जाता जिसमें उन्हें कई प्रकार की छूट देने का लिखा जाता था। जैसे *गुवाड़ी* को रहने के लिए जमीन, *भांछ* (घरों पर कर) 2 साल तक आधा लिया जायेगा।[18] उन्हें किसी प्रकार से डरने की जरूरत नहीं, उनका ख्याल रखा जाएगा। इसी प्रकार गांव छोड़कर जाने वाले वापस आने पर नजराना देते थे या *पाछोकी* (पिछली) बकाया चुकाने हेतु कहा जाता था।[19] गांव मलसीसर के जीवनिया चंड, अतभागदेसर के रूपला, गांव वीगे के उदीया फुसिया, गांव रिणमलसर के सुखिया, गांव पीलापरा के आसियां, खेतियां, सारगियां, गांव कस्तूरदेसर के नाथियां, इसरीया, भगुडो, केसियो, तुलछो, गांव खारे का सादूला, गांव काकड़ा के वीरामिया, गांव मेलूसर के खेराजिया, गांव जेसिंगसर की गुवाड़ी, गांव धूपालिये के चंड, गांव शोभसर के नानगिया, गांव नौरंगदेसर के रे डेरे के चार बेटे, गांव मेहासर के भीयां, गांव मालकसर के गोधुड़ा के द्वारा गांव छोड़कर दूसरे गाँवो में जाकर बस जाने पर उनको वापस गांव में बसने के लिए आदेश भेजा गया। उनको कई रियायतें देने का आदेश में लिखा गया।

*पडत की खालों*[20] (चमड़ा) का ठेका भी बेगार निकालने वाली *गुवाड़ी* को ही दिया जाता था, किसी अन्य *गुवाड़ी* को नहीं दिया जाता था।[21] गांव साहवे के ब्राह्मणों और चारणों, तथा खटदर्शन आदि समस्त गांववासियों को आदेश दिया गया था, कि *पड़त* हमेशा दरबार की बेगार निकलने वाले बेगारी लेता था। अब साईदास तथा तारा चंड बेगार नहीं निकालते है, फिर भी उनको आधी पड़त दी जा रही है। यह बात ठीक नहीं है, अब जो दरबार की बेगार निकलेगा उसे ही पड़त देना। जो दरबार की बेगार नहीं निकालेगा उसे *पड़त* नहीं दी जावे। अगर आदेश नहीं माना, तो तलब आयेगी। *पड़त* का ठेका प्रति माह के साढ़े छह रुपये की दर से 12 महीने के लिए दिया जाता था।[22] प्रति वर्ष के ठेके की राशि एक साथ जमा नहीं करवा पाने पर किश्तों में भी चुकाया जा सकता था।[23] किश्तों में पूरी राशि जमा नहीं होने पर अगले वर्ष में भुगतान प्राप्त कर लिया जाता था।[24] *पड़त* का ठेका लेने वालों से प्रति माह एक *गोवड़ा* (गाय की खाल) भी ली जाती थी।[25] कई बार *पड़त* नजराना लेकर हिस्सों में भी दी जाती थी, जितने हिस्से की *पड़त* दी जाती उसकी बेगार तथा पड़त हिस्सेदार लेता था।[26] अनूपगढ़ तल (क्षेत्र) की *पड़त* रूपले को सम्वत् 1927 में *मुकाते* (ठेके) दिए जाने का भी उल्लेख मिलता है। झझू के पालीवाल ब्राह्मणों को राज्य की ओर से

आदेश दिया गया कि दरबार की बेगार निकलने वाले बेगारी को पड़त दी जाती है लेकिन बेगार नहीं निकालने वाले को आधी *पड़त* किसलिए दी जा रही है। उनको पड़त नहीं दी जावे। यदि आदेश नहीं माना तो तलब आएगी।[27]

मेघवाल जाति के बुनकरों द्वारा कपड़ा बनाने के कई उल्लेख सावा बहियों में मिलते हैं। उनके द्वारा जहाँ पर बैठकर जिस गड्ढे में पाँव रखकर कपड़ा बुनते हैं, उसे साल कहते हैं। जोधपुर में बुनकरों से *साल बाब* (कर) तथा बीकानेर में साल नामक कर लगता था। जोधपुर में पहले 16 से कम टुकड़ी और 24 हाथ से कम रेजा (मोटा कपडा) बनाने पर जुर्माना लगाया जाता था।[28] बीकानेर राज्य में हर *साल* (गड्ढे) में कपड़ा बुनने पर 2 रुपये प्रति वर्ष तथा एक सेर सूत लिया जाता था, जो सूत लिया जाता था, उसे बेच दिया जाता या फिर उसका कपड़ा बुनकरों को पारिश्रमिक देकर बनवा लिया जाता था।[29] राजगढ़ में वि.सं. 1915/1858 ई. में चंड, भांभी से प्रति हथकरघे के 2 रुपये के हिसाब से निन्यानवें रुपये तथा चार आने वसूलने का उल्लेख मिलता है। राजगढ़ में वि.सं. 1861/1804 ई. में पिचहत्तर रुपये तथा बारह आना वसूले गये थे। राजगढ़ में वि.सं. 1914-16/1857-59 ई. में एक सौ दस रूपये तथा आठ आने वसूलने का उल्लेख मिलता है। रैणी में वि.सं. 1921/1864 ई. में साठ रुपये तथा चार आने तीन पैसे वसूल किये गये। राजगढ़ में वि.सं. 1924/1867 ई. में अठत्तर रुपये वसूल किये गये।

बीकानेर राज्य में इस जाति के लोगों में से ही किसी को कोटवाल भी नियुक्त किया जाता था। राज्य की ओर से उसको पगड़ी बंधवाई जाती थी।[30] उसे हवलदार के पास कोटवाली में रहकर किसी को बुला कर लाना या फिर छोटे-मोटे कार्यों को करना पड़ता था।

मेघवाल जाति के लोगों द्वारा खेती तथा खेतीहर मजदूरी के अलावा अतिरिक्त आय के लिए घास बेच कर अपना निर्वाह किया जाता था।[31] ऊंट पर घास लादकर बेचने के कई सन्दर्भ तत्कालीन बहियों में मिलते है। इसके अतिरिक्त चारा बेचने के भी कई उल्लेख मिलते है। चारे को *झाल* (ऊंट गाड़े पर) के रूप में बेचा जाता था।[32] कुछ लोग राज्य के तबेले के पशु चराने का कार्य करते थे[33], वही कुछ लोग गायें चराने का कार्य भी करते थे। बहुत कम लोग जूते बनाने तथा पुरानी जूतियां गांठने का कार्य करते थे।[34] जूते बनाने पर *सिलाड़ी* नामक कर लगता था। *सिलाड़ी* उस सिला (पत्थर) को कहते हैं जहाँ पर जूते बनाये जाते थे।

मेघवाल जाति में नाता प्रथा प्रचलित थी। नाता किये जाने पर राज्य द्वारा *रीठ*[35]

नामक कर वसूल किया जाता था। बेटी के विवाह पर *साडी सेल* नामक कर के 2 रुपये वसूल किये जाते थे।[36] इसके अतिरिक्त *धुंआ भांछ* नामक कर (प्रति घर) से वसूला जाता था।[37]

इस प्रकार उत्तर-पश्चिमी राजपूताने में मेघवाल समाज द्वारा समाज उपयोगी कार्यों में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। मेघवाल समाज के लोगों द्वारा विभिन्न प्रकार के करों का भुगतान जैसे- *रीठ, पड़त का ठेका, साल सिलाड़ी, बीघेड़ी, धुआं भांछ, साड़ी सेला, मुकाता,* तथा *नजराना* आदि का भुगतान कर राज्य में अपना आर्थिक योगदान दिया।

19वीं सदी में सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना का नया युग प्रारम्भ हुआ। इस युग में पाश्चात्य ज्ञान के प्रभाव से एक नवीन भावना तथा चेतना प्रारम्भ हुई। भारतीयों के राष्ट्रीय, धार्मिक और सामाजिक जीवन में नव चेतना का संचार हुआ। जाति व्यवस्था के विरोध में अनेक सुधारवादी आंदोलन शुरू हो गए। आर्य-समाज, ब्रह्म समाज तथा प्रार्थना समाज ने जातीय आधार पर भेदभाव के विरुद्ध आवाज उठाई। इन सुधारवादी आंदोलनों के कारण निम्न वर्गों में काफी सुधार हुआ, समय-समय पर कई अधिनियम पारित हुए। इस काल में ऐसा वातावरण तैयार हुआ जिससे जाति व्यवस्था में परिवर्तन लाने में महत्पूर्ण योगदान दिया। 20वीं सदी में गोपाल कृष्ण गोखले, लोकमान्य तिलक, रानाडे तथा महात्मा गांधी के प्रयास उल्लेखनीय है।

## सन्दर्भ


1. जयशंकर मिश्र, *प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास,* दसवां संस्करण, बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 2006, पृ. 147
2. कैलाशनाथ व्यास एवं देवेंद्रसिंह गहलोत, *राजस्थान की जातियों का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन*, द्वितीय संस्करण, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2010, पृ. 30-31
3. के.डी. अर्सकिन, *राजपूताना गजेटियर: द वेस्टर्न राजपुताना स्टेट्स रेजीडेंसी एंड बीकानेर*, विंटेज बुक्स, 1992, पृ. 87-88
4. पी.डब्ल्यू. पाउलेट, *गजेटियर ऑफ द बीकानेर स्टेट,* गवर्नमेंट प्रेस, बीकानेर, 1874, पृ. 99; हरदयालसिंह, *रिपोर्ट मरदुमशुमारी राजमारवाड़,* जगदीश सिंह गहलोत शोध संस्थान, जोधपुर, 1997, पृ. 527-529
5. *कागद बही,* नं. 3, वि.सं. 1827/1770 ई., बीकानेर रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर, ऑनलाइन सर्वर, इमेज नं. 30-31

6. *कागद बही,* नं. 79, वि.सं. 1933/1876 ई., इमेज नं. 4, बीकानेर रिकॉर्ड्स
7. *कागद बही,* नं. 60, वि.सं. 1910/1853 ई., इमेज नं. 71, बीकानेर रिकॉर्ड्स
8. *बही कागदा तलबा री,* वि.सं. 1896-99/1839-1842 ई., इमेज नं. 41, बीकानेर रिकॉर्ड्स
9. *असूचीबद्ध सावा बही चूरू,* वि.सं. 1898/1841 ई., इमेज नं. 56, बीकानेर रिकॉर्ड्स
10. *असूचीबद्ध सावा बही सूरतगढ़,* वि.सं. 1924/1867 ई., इमेज नं. 26, बीकानेर रिकॉर्ड्स
11. *कागद बही,* नं. 9, वि.सं. 1851/1794 ई., इमेज नं. 71, बीकानेर रिकॉर्ड्स
12. *कागद बही,* नं. 61, वि.सं. 1911-12/1854-55 ई., इमेज नं. 109, बीकानेर रिकॉर्ड्स
13. *कागद बही,* नं. 9, वि.सं. 1851/1794 ई., पृ. 105, बीकानेर रिकॉर्ड्स
14. वही, पृ. 107
15. वही, पृ. 71
16. *कागद बही,* नं. 61, वि.सं. 1911-12/1854-55 ई., इमेज नं. 109, बीकानेर रिकॉर्ड्स
17. *सावा बही छापर,* नं. 8, वि.सं. 1925/1868 ई., इमेज नं. 15, बीकानेर रिकॉर्ड्स
18. *कागद बही,* नं. 5, वि.सं. 1838/1781 ई., पृ. 17, बीकानेर रिकॉर्ड्स
19. *कागद बही,* नं. 11, वि.सं. 1857/1800 ई., इमेज नं. 60, बीकानेर रिकॉर्ड्स
20. *असूचीबद्ध सावा बही अनूपगढ़,* वि.सं 1944/1887 ई., इमेज नं. 70, बीकानेर रिकॉर्ड्स
21. *कागद बही,* नं. 79, वि.सं. 1933/1876 ई., इमेज नं. 4
22. *सावा बही चूरू,* नं. 29, वि.सं. 1925/1868 ई., इमेज नं. 8; *असूचीबद्ध सावा बही चूरू,* वि.सं. 1904/1847 ई., इमेज नं. 246
23. *सावा बही सुजानगढ़,* नं. 29, वि.सं. 1939/1882 ई., इमेज नं. 56; *असूचीबद्ध सावा बही चूरू,* वि.सं 1862/1805 ई., इमेज नं. 25
24. *असूचीबद्ध सावा बही अनूपगढ़,* वि.सं. 1920/1863 ई., इमेज नं. 13, बीकानेर रिकॉर्ड्स
25. *कागद बही,* नं. 65, वि.सं. 1916-17/1859-60 ई., इमेज नं. 79

26. *असूचीबद्ध सावा बही रैणी,* वि.सं 1920/1863 ई., इमेज नं. 33, बीकानेर रिकॉर्ड्स
27. *कागद बही,* नं. 79, वि.सं. 1933/1876 ई., इमेज नं. 4
28. हरदयालसिंह, *रिपोर्ट मरदुमशुमारी राजमारवाड़,* पृ. 534
29. *सावा बही राजगढ़,* नं. 27, वि.सं. 1914-16/1857-1859 ई., इमेज नं. 395, बीकानेर रिकॉर्ड्स
30. *सावा बही सुजानगढ़,* नं. 29, वि.सं. 1939/1882 ई., इमेज नं. 237
31. *सावा बही रतनगढ़,* नं. 14, वि.सं. 1913/1856 ई., पृ. 55-56
32. *सावा बही भीनासर,* नं. 10, वि.सं. 1939/1882 ई., इमेज नं. 42, बीकानेर रिकॉर्ड्स
33. *सावा बही सुजानगढ़,* नं. 29, वि.सं. 1939/1882 ई., इमेज नं. 170
34. हरदयालसिंह, *रिपोर्ट मरदुमशुमारी राजमारवाड़,* पृ. 534; *सावा बही टिब्बी,* नं. 7, वि.सं. 1924/1867 ई., पृ. 44, 46; *सावा बही रतनगढ़,* नं. 14, वि.सं. 1913/1856 ई., इमेज नं. 31, बीकानेर रिकॉर्ड्स
35. *सावा बही राजगढ़,* नं. 27, वि.सं. 1914-16/1857-59 ई., इमेज नं. 99
36. *सावा बही डूंगरगढ़,* नं. 2, वि.सं. 1939/1882 ई., पृ. 4, बीकानेर रिकॉर्ड्स
37. *असूचीबद्ध सावा बही चूरू,* वि.सं. 1904/1847 ई., इमेज नं. 282-283

***शोधार्थी**
इतिहास विभाग
श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, पीलीबंगा
हनुमानगढ़ (राजस्थान)

****सहायक आचार्य**
इतिहास विभाग
श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, पीलीबंगा
हनुमानगढ़ (राजस्थान)